नवरत्न

(संत महाकवि कृष्ण जू राजदान के नौ मूल कश्मीरी भक्ति भजनों का हिन्दी पद्य रूपांतर)

डॉ॰ मथुरादत्त पाण्डेय

संत महाकवि कृष्ण जू राजदान के नौ मूल कश्मीरी भक्ति भजनों का हिन्दी पद्य रूपांतर

नवरत्न

अनुवादकः

डॉ॰ मथुरादत्त पाण्डेय पी.ई.एस.*(I)*

(अवकाशप्राप्त प्रिंसिपल)

1292, सैक्टर 15, पंचकूला (हरियाणा)

जम्मू–कश्मीर विचार मंच

18, श्याम एन्कलेव, विकास मार्ग,

दिल्ली – 110 092

दूरभाष – 22373413

मूल्यः दस रुपये

शारदा पु. ...

(संजीवनी श. द. क. द्र)

क्रमांक ......558......

ACKNOWLEDGEMENT

Translators have always trembled in their attempts to translate from one language into another language. This has been more starkly true when the subject matter of the translation is poetry. The reasons are not far to seek. "The beauties of poetry cannot be preserved", said Samuel Johnson, "in any language except that in which it was originally written." This remark is true of Kashmiri poetry and truer of Krishnajoo Razdan's poetry for the simple reason that the poetic formats and idioms of expression devised by him served as models for his contemporaries and followers alike, which, in a way, justifies the validity of the erudite critical opinion that Krishnajoo Razdan is a poets' poet. Instead of hurrying through such narrative segments we observe him luxuriating in deliberate verbal stokes for conjuring up some captivating aspects of the nineteenth century Kashmiri Hindus life. Evidently, it is not easy to translate the rhyming couplets and musical quatrains, the narration of which is ingratiating in the tracts where the poet adopts rhyming couplets embellished with sweet metaphors, similes, alliterations and assonances. In the circumstances, one shudders to imagine the arduousness of the task of translating his Kashmiri poems into Hindi poetry while preserving the inimitable charm by the clever use of Arabic, Persian, and Indian elements of the poetical language, each of which bears not only its simple meaning but also different accessory notions. That Dr. Mathura Datt Pandey, whose works have been a subject of research enabling scholars to earn doctoral degrees, was able to do precisely the same with comparative ease only speaks volumes not only about his mastery over Hindi and Sanskrit languages, of which he is an acknowledged authority in his own right, but also of his profound scholarship of our sacred scriptures, erudition, and the fertile imagination that so activated the genius in him as to enable him to grasp the spirit of each Kashmiri poem, nay, of each stanza of Krishnajoo Razdan with the help of amateurish and sketchy Hindi translation that was made available to him, into beautifully varnished and taut Hindi couplets aimed at introducing the Kashmiri poet to the Hindi world. Words fail us in expressing our gratitude to Dr. Pandey for this invaluable favour. We can do no better than to offer him our reverential regards and pray for his long and healthy life to enable him to realize the stupendous goal he has set before himself. Amen!

दो शब्द

कवि क्रान्तदर्शी ऋषियों की तरह कभी कभी ही अवतीर्ण होते हैं और उनमें भी भक्त कवि और भी दुर्लभ होते हैं। नाम मात्र के कवि और भक्तों की संख्या विरल नहीं होती; किन्तु सच्चे और सहज भाव से सृजन करने वाले सर्वत्र तथा सर्वदा नहीं दिखाई देते। कृष्ण जू महाराज कश्मीर के होते हुए भी भक्त और कवि रूप में भारतीय प्रमुख भक्ति-धारा से सम्बद्ध कवि हैं। उन पर भारतीय सन्त परम्परा का भी अक्षुण्ण प्रभाव दिखाई देता है। विरोधाभासी (उलटबाँसी रूप) वर्णन-पद्धति भी कृष्ण जू महाराज की कविता में विद्यमान दिखाई देती है।

मुझसे वह करवाइये कुछ भी करे न पड़ना
ऐसा मुझे पढ़ाइये जिसे पड़े ना पढ़ना
वह दे दुहराने मुझे जो न पड़े दुहराना।
कहे स्मरण करने वही, जो न याद कुछ करना।

x x x

घंटा बजाये बिन बजे शंखोम फूँके बिनु करे।
संगीत-स्वर अजपा जपी गाये बिना ही सुन पड़े ।।

ऐसे स्थल वहीं देखने को मिलते हैं जहाँ वे भावावेश की स्थिति को पार कर जाते हैं। अधिकांशतः श्रीकृष्ण जू प्रपत्तिमूलक भक्ति के कवि हैं। भक्ति के लिए शर्त होती है कि भक्त के प्रभु सर्व-समर्थ तथा सर्वगुणोपेत हों और भक्त अपने आपको उनके समक्ष सर्वथा अकिंचन माने।

शिव-स्तुति करते हुए भक्त कृष्ण जू महाराज कहते हैं कि वे साधुओं के साधु हैं, योगियों के योगी हैं, ज्ञानियों के ज्ञान हैं पूर्ण पुरुष हैं, नाद–बिन्दु स्वरूप हैं, अच्युत हैं और उनकी कृपा से ही चेतना का राज्य चलता है :-

तेरी कृपा से चित्त की चेतना अच्युत ! चले।
जिस विना सारी क्रिया जगत् की कुण्ठित बने ॥

इस तरह प्रभु को श्रेष्ठ मानते हुए वे अपने को तुच्छातितुच्छ मानते हैं। भक्ति के लिए आराध्य और आराधक में ऐसा भाव आवश्यक है :-

जन्मना ब्राह्मण भले ही दूर ब्रह्म–विचार से
ध्यान में लाओ न राक्षस हूँ कि मैं व्यवहार से।

तभी ऐसी उत्कट भावना हृदय में जगती है कि जिससे भक्त प्रभु को अपनी निधि मानने लगता है और प्रभु के चरणों में सर्वस्व समर्पण कर देना चाहता है।

चरण–कमल धर धीरे धीरे काश ! कभी तुम आ जाओ
मैं सर्वस्व लुटा दूँगा उन चरणों पर खुश होकर।

x x x

हे अमरनाथ ! हे नीलकण्ठ ! मैं तेरे शुभ चरणों पर
करूँ अर्चना खुशी खुशी से अपना शीश चढ़ाकर।।

कृष्ण जू महाराज भक्ति के आवेश में सन्त कबीर की तरह मदमस्त दिखाई देते हैं। मस्ती में प्रायः भाषा के करारे टूटने लग जाते हैं। किन्तु कृष्ण जू की भाषा तब भी प्रांजल एवं सारगर्भित रहती है। यह

इसलिए कि वे कबीर के असदृश पढ़े लिखे व्यक्ति थे। उदाहरणार्थ प्रस्तुत है :-

दूर चिन्ता हो गई औ' चेतना–पुष्पित लता पर
शक्ति रूपी ओस-जल की लो हो रही वर्षा सुघड़
जगने दे आत्मा को अरे उसके अन्दर मनुजवर
जो अनात्मक तत्त्व की करदे विदाई शीघ्रतर।

x x x

अपने हित में माँगू मस्ती। जो न भाँग पीकर-सी सस्ती।।
होश गँवाकर बके अनर्गल। घूमे जिससे बनकर पागल।।

कृष्ण जू महाराज भगवद्-भक्त हैं। रामकृष्णादि-अवतारों की वे अवहेलना तो नहीं करते हैं; किन्तु शिव उनके परम आराध्य हैं। वे नारायण की स्तुति करते हुए कहते हैं:

राम ! ढहा दो ममता लंका। बाजे प्रेम-विभीषण डंका।

जो अभेद की दृष्टि घुमाऊँ । कृष्ण राम शिव एक बताऊँ।।

रास-लीला का भी उन्होने बड़ा मार्मिक वर्णन किया है; किन्तु अधिकांशत: वे शिव–स्वरूप का ही स्तवन करते हैं। वे शिव को साधुओं के साधु तथा योगियों के योग रूप में देखते हैं। नीलकण्ठ अमरनाथ को वे अपना शीश अर्पित कर देना चाहते हैं :-

हे अमरनाथ ! हे नीलकण्ठ ! मैं तेरे शुभ चरणों पर
करूँ अर्चना खुशी खुशी से अपना शीश चढ़ाकर।
करूँ कामना बना रहे भक्त कृष्ण पर दया-भाव
मुझमें तेरी चाह जगी और जगा विश्वास अमर।।

'शम्भु महराज की आराधना' में शिव को अपने आँख की पुतली बना लेना चाहते हैं। शिव-प्रतिमा पर न्यौछावर होने की उनकी बलवती इच्छा प्रकट होती है। 'शिव शरणम्' होना उनका लक्ष्य है:

शम्भो ! लेकर आश यहाँ आया तेरे पास।
अनुकम्पा मुझ पर करो समझ मुझे निज दास।।

'पोशिपूजा' में वे सर्वथा भाव–मुग्ध होकर शिव की शोभा का वर्णन करते अघाते नहीं। फलतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि कश्मीर के शैवागम दर्शन से प्रभावित होकर वे शैव भक्त बने दृष्टिगत होते हैं।

कला पक्ष

श्री कृष्ण जू भक्ति-गीतों में केवल कोरी भक्ति का निदर्शन नहीं करते हैं, अपितु सूर और तुलसी की तरह उनके प्रत्येक पद काव्य का एक उत्कृष्ट नमूना है। सर्वत्र भक्ति-रस या भक्ति-भाव कला की अनूठी विशेषताओं से उद्भूत होता है। ध्वनि, अलंकार, वक्रोक्तियों के अद्भुत रूपों को उपस्थित करने में वे सफल हुए हैं। सांग रूपक उनका प्रिय अलकांर रहा है। उदाहरणार्थ नीचे कुछ पंक्तियाँ दी जाती है :-

विषय-त्याग का माघ-व्रत सत्संगति उपवास।
तथा बना ले शुद्ध मन आत्मतीर्थ कर वास।

कटवा माया मोह के लम्बे लम्बे बाल।
बस्ती में ऐसे बिता निज वनवासी काल।

मोह-दारु में ज्ञान-अग्नि दें, भक्ति रूप लपटें धधका दें
विस्फोटक अज्ञान हमारा, तब उनसे ही जला, मिटा दें।

रूपकातिशयोक्ति के बड़े मनोरम दृश्य श्री कृष्ण जू ने खींचे हैं:-

सांख्य-योग-वसन्त मेरी वाटिका में बस चला है
चटकती कलियाँ रसीली, पत्र-दल हँसने लगा है।

यहाँ सांख्य-योग-वसन्त में रूपक है। 'वाटिका', 'चटकती कलियाँ' तथा 'पत्र-दल' शब्दों में रूपकातिशयोक्ति है।

शम्भुनाथ ! तेरे आते ही घर के सूखे सोतों से
फिर से बहने लग जाये तब पानी उमड़ उमड़ कर।

यहाँ प्रयोजनवती लक्षणाशक्ति तथा रूपकातिशयोक्ति का चमत्कार दर्शनीय है। परम्परित रूपक के ये उदाहरण भी उल्लेखनीय हैं:-

राम ढहा दे मेरी लंका। बाजे प्रेम विभीषण डंका।

इन्द्रिय रूपी फूल खिले मन के उत्तम बाग
तुम्हें चढ़ाऊँ पूजता लेकर त्याग-विराग।

श्री कृष्ण जू महाराज काव्य-बिम्बों को उपस्थित करने में भी कुशलता का परिचय देते हैं। चक्की पर आकर लोग अनाज को पीस कर खाने के योग्य बना लेते हैं। भगवान् नारायण से प्रार्थना करते हुए वे कहते हैं कि वे उनकी कृपा प्राप्त करने के लिए प्रतीक्षा

कर रहे हैं। कब उनकी ललक पूरी होने की बारी आयेगी अर्थात् भगवत् कृपा प्राप्त कर कब संसार से मुक्ति मिलेगी।

लोभ-फसल ले चक्की आया। बारी मिलते हो मन भाया।
भव-सागर तरने का मेरा। है संकल्प भरोसा तेरा।

यहाँ दृष्टान्त-अलंकार-चित्रित बिम्ब दर्शनीय है। 'हाथ थाम कर पार उतारो। पारस छुआ लौह उद्धारो।' इसमें कवि प्रभु की ऐसी कृपा चाहता है कि जिससे 'जलती आग फुलवारी' बन जाय।

संक्षेप में कहा जाये तो श्री कृष्ण जू महाराज का कथ्य तो भक्ति तथा वैराग्य है; किन्तु उनका शिल्प गूढ एवं मनोरम भावों को प्रकट करने की क्षमता रखता है। जिससे उनकी रचनायें काव्य-साहित्य का उत्औष्ट नमूना बनी दृष्टिगत होती हैं।

मैंने अभी उन्हें भक्ति-वैराग्य का कवि कहा है। उस विषय को थोड़ा और स्पष्ट कर दूँ कि वे भक्ति रस के मूर्धन्य कश्मीरी कवि हैं। भावों को निवेदित करने का उनका कौशल सर्वथा स्तुत्य है। वैराग्य के लिए वे स्वरूपतः संसार-त्याग की बात नहीं करते है, अपितु मन से विरक्त होकर दुनियाई जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा देते दृष्टिगत होते हैं यथा-

सज्जन बनकर हे मनुज ! बना चित्त कैलास
धरती पर रहकर करो जैसे तुम वनवास।

इस उक्ति के समर्थन में कवि उदाहरण देता है:-

रास खेल श्रीकृष्ण ने रचा गोपियों संग।
रहे ब्रह्मचारी सदा कैसा था वह ढंग! ॥

तब कवि निष्कर्ष निकालते हुए निर्णय देता है:-

'राख त्याग की उर रमा' सजा राख से देह।
शुक से बोले व्यास यही, मानो वन-सा गेह॥

निष्कर्ष यह है कि श्री कृष्ण जू महाराज ने अपने कथ्य अर्थात् नारायण, कृष्ण-राम विशेषत: शिव की भक्ति में बड़े उत्कृष्ट भाव व्यक्त किये है और उन्हें प्रकट करने की जो शैली अपनाई है वह अद्‌भुत है। अपने पूर्वापर समय के भक्त कवियों की श्रेणी में उनका नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा जाना चाहिए॥

शिव के भक्ति-भजन

मादल, बेल, गुलाब, व्यन
और कमल के फूल
लेकर चाहूँ पूजना
शंकर मंगलमूल ॥१॥

बहे गंग जिसकी मुकुट-सी जटा से
विष्णु-ब्रह्मा भी करते जिसका नमन,
शुभंकर उसी शंभुको भक्तिपूर्वक
कहूँ जय, चढ़ाऊँ भाव-भीने सुमन ॥२॥

श्रद्धा-प्रेमजनित मस्ती से मैं बना तुम्हारा मतवाला,
पर फूलों के शहज़ादे ! तुम मेरी होश न हरना।
यह संसार असार रहा भरा हुआ छल-छन्दों से
बाजी कहीं न हार चलूँ, गफ़लत में मुझे न रखना ॥३॥

तेरे दर्शन की अभिलाषा बनी हुई है मन में
देकर उसे कृतार्थ करो मुझे सदाशिव ! जगदीश्वर !
जी करता है बलि जाऊँ मैं तुम पर हे शिवशंकर !
मुझे भरोसा है तेरा, क्षमा करो प्रभु, खुश होकर ॥४॥

चरण-कमल धर धीरे-धीरे काश ! कभी तुम आ जाओ।
मैं सर्वस्व लुटा दूँगा उन चरणों पर खुश होकर।
शंभुनाथ ! तेरे आते ही घर के सूखे सोतों से
फिर से बहने लग जाये तब पानी उमड़ उमड़ कर ॥५॥

हे अमरनाथ ! हे नीलकंठ ! मैं तेरे शुभ चरणों पर,
करूँ अर्चना खुशी खुशी से अपना शीश चढ़ाकर।
करूँ कामना–बना रहे भक्त कृष्ण पर दयाभाव,
मुझमें तेरी चाह जगी और जगा विश्वास अमर ॥६॥

* * *

श्री नारायण से प्रार्थना

(चौपाई छन्द)

तुम बिन और न मोक्ष-प्रदाता । रहे सचाई से ही नाता ॥
उचित, अपेक्षित मुझे दिला दो । योग-ज्ञान का सार सुझा दो ॥ १॥

चाहे सब कुछ ले लो मेरा । दिया हुआ है जो भी तेरा ॥
वापस ले लो चाहे उसको । पर अपने दर्शन दो मुझको ॥
ऐसी दो निज भक्ति उदारा । रहे सना व्यवहार हमारा ॥ २॥

अपने हित मैं माँगूँ मस्ती । जो न भाँग पीकर-सी सस्ती ॥
होश गँवाकर बके अनर्गल । घूमे जिससे बनकर पागल ॥
मस्ती वह, जो रहे सदा स्थिर । होश-चेतना बनी रहे चिर ॥
भक्ति-रंग केसरिया देकर । कपड़े रँगने का दो अवसर ॥ ३॥

दारु-स्वभाव रहा जल जाना । और आग का दारु जलाना ॥
मोह-दारु में ज्ञान अग्नि दें । भक्ति रूप लपटें धधका दें ॥
विस्फोटक-अज्ञान हमारा । तब उनसे ही जला, मिटा दें ॥ ४॥

राम ! ढहा दो ममता-लंका । बाजे प्रेम-विभीषण-डंका ॥
मेरे मोह-घमण्ड भगा दो । भव-भागर से पार लगा दो ॥ ५॥

शक्ति-भक्ति तेरी शोभायें । मेरे मन को नहीं लुभायें ॥
मुझे भक्ति-उपहार दीजिये । मेरा यह उपकार कीजिये ॥ ६॥

जो अभेद की दृष्टि घुमाऊँ । कृष्ण, राम, शिव एक बताऊँ ॥
परम धाम में वास तुम्हारा । आने का मन बना हमारा ॥
हमें शीघ्र उसकी आज्ञा हो । करूं प्रतीक्षा 'हाँ' भी कर दो ॥७॥

पद-पदार्थ मिथ्या क्या माँगूँ । भोग चुका हूँ, उनसे भागूँ ॥
भोग भोगकर शान्ति गँवाई । सत्संगति से फिर वह पाई ॥
प्रेरक जो हो सत्संगों का । ऐसा दो आचार भक्ति का ॥८॥

मिथ्या वचन कहत वय बीती । सिद्धि न कर्म बिना मनचीती ॥
लोभ-फसल ले चक्की आया । बारी मिलते हो मनभाया ॥९॥

भवसागर तरने का मेरा । है संकल्प, भरोसा तेरा ॥
हाथ थाम कर पार उतारो । पारस छुआ लौह उद्धारो ॥
कृपा करो प्रभु, ऐसी न्यारी । जलती आग बने फुलवारी ॥१०॥

क्यों बखान करना दोषों का । चखना मुझे मजा भोगों का ॥
पीछे खट-पट से विमुक्त हो । रहूँ शान्त, ऐसा शम-दम दो ॥११॥

यह काया द्वारिका पुरीवर । जिसमें बसे कृष्ण जगदीश्वर ॥
भक्त सुदामा-सम मैं चाहूँ । सब ऐश्वर्य इकट्ठे पाऊँ ॥१२॥

* * *

श्री शम्भु महाराज की आराधना

निष्कल निर्मल शम्भुवर अनासक्त-सरताज ।
शरणागत-वत्सल ! मुझे वरण करो महाराज ॥ १॥

नयन-कंज-दल-सलिल से तुमको रह रह सींच ।
नहलाऊँ जल-थल-खिले हुए कमल-दल बीच ॥
जल-थल, पनघट पर तुम्हें नहलाऊँ प्रभु, आज ।
शरणागत-वत्सल ! मुझे वरण करो महाराज ॥ २॥

शान्तिमयी तेजस्विनी प्रतिमा तेरी शुद्ध ।
दमके बिजली-योग-सी माया-कालिख-मुक्त ।
ऐसी तेरी देह पर बलि जाऊँ मैं आज ।
शरणागत-वत्सल ! मुझे वरण करो महाराज ॥ ३॥

प्यार करूँ इतना अधिक-तुम्हें बसाऊँ आँख ।
सत् की सम्मति दो मुझे, ताकि न फाकूँ राख ॥
भटकूँ ना अब और मैं, ऐसा हो कुछ काज ।
शरणागत-वत्सल ! मुझे वरण करो महाराज ॥ ४॥

इन्द्रिय-रूपी फूल खिले मन के उत्तम बाग़ ।
तुम्हें चढ़ाऊँ पूजता लेकर त्याग-विराग ।
इसी तीव्र वैराग्य से वारूँगा सिर-साज ।
शरणागत-वत्सल ! मुझे वरण करो महाराज ॥ ५॥

शम्भो ! लेकर आश यहाँ आया तेरे पास ।
अनुकम्पा मुझ पर करो समझ मुझे निज दास ।
दुःख दूर मेरा करो--तुम हो मंगल-राज ।
शरणागत-वत्सल ! मुझे वरण करो महाराज ॥ ६॥

हरो पाप मेरे प्रभो ! मुझ पर करो प्रसाद ।
'केवल' औ 'अद्वितीय' ले नाम करूँ मैं याद ॥
पद-दर्शन दे दूर करो कष्ट मेरा महाराज ।
शरणागत-वत्सल ! मुझे वरण करो महाराज ॥ ७॥

योग-महल, विज्ञान-गृह, श्रद्धा द्वार-कपाट ।
खोलो कुंडी लगी हुई खुले कि जिससे बाट ॥
खोलो लेकर शक्ति-बल और युक्ति-छल-छाज ।
शरणागत-वत्सल ! मुझे वरण करो महाराज ॥ ८॥

मेरे ब्रह्मन् जन्म का अभी नवम है साल ।
शक्ति-पात से -- कर दया -- भर दो मेरा थाल ।
जाँचो शुभफल-फाल दो मुक्ताहल[१] का दाजः ।
अनुकम्पा खलियान से दान मुझे दो आज ।
शरणागत-वत्सल ! मुझे वरण करो महाराज ॥ ९॥

---

१ मोती

मुझसे वह करवाइये कुछ भी करे न पड़ना ।
ऐसा मुझे पढ़ाइये जिसे पड़े ना पढ़ना ॥
वह दे दुहराने मुझे, जो न पड़े दुहराना ।
कहें स्मरण करने वही, जो न याद कुछ करना ॥
राग-नगर या त्याग-वन, करूँ जहाँ भी राज, ।
शरणागत-वत्सल ! मुझे वरण करो महाराज ॥ १०॥

शम्भु ! उतारो कृष्ण को भव-सागर से पार ।
संकट और अशान्ति से यहाँ करो उद्धार ॥
संकट-बेचैनी हरो, ताकि, करूँ, निज जाँच ।
शरणागत-वत्सल ! मुझे वरण करो महाराज ॥ ११॥

* * *

योग की साधना पर

डुबकी लगाई योगबल से दलहजारी कमल पर ।
चित्त नौ-पतवार ली सोऽहं सुदृढ़ बल्ला पकड़ ।। १।।

बचपन में अपने आप उमड़ा प्रेम तेरा हृदय में ।
बढ़ती गई रुचि उत्तरोत्तर स्वतः उसके विषय में ।। २।।

वह प्रेम ऐसा बढ़ गया यम देखकर तब स्तब्ध था ।
रख न पाया कदम आगे इस तरह वह मुग्ध था ।। ३।।

जाने वही निज रूप जिसको भ्रम न अपने आप का ।
होगा न त्रैविध कर्म से क्षय, अन्यथा, त्रय-ताप का ।।
परवा नहीं कोई न डर आलोचना-अपवाद का ।। ४।।

साँस खींचा, साँस छोड़ा, ओम बोला ध्यान कर ।
प्यार पाया, बींध डाला मोतियों को चयन कर ।। ५।।

स्थान अद्‌भुत, स्तम्भ-अद्‌भुत, अद्‌भुत निवासी भी रहे ।
उसका निराश्रित वास है, कहते मनुज विस्मित बड़े ।। ६।।

घंटा बजाये बिन बजे, शंखोम् फूँके बिन करे ।
संगीत-स्वर अजपा-जपी गाये बिना ही सुन पड़े ।। ७।।

काम्य-कर्मों का हमारे शीश से बोझा उठा ।
निष्काम-कर्मों की गली में प्रेरणा-पग धर मिला ॥
कीजिए ऐसा प्रभो ! दम लूँ पहुँच कर ही वहाँ, ।
निर्वासनात्मक कर्म का ही हो बिछा आसन जहाँ ॥ ८॥

सांख्य योग-वसन्त मेरी वाटिका में वस चला है ।
चटकती कलियाँ रसीली, पत्र-दल हँसने लगा हैं ।
चेतना-पुष्पित लता पर – दूर जो चिन्ता हुई ।
शान्ति रूपी ओस-जल की सुघड़ वर्षा हो रही ॥
जगने दे आतमा को अरे, उर के अन्दर मनुजवर ।
औ' अनात्मक तत्त्व की कर दे विदाई शीघ्रतर ॥ ९॥

सत्य सबसे श्रेष्ठ जग में वसुदेव-सुत भगवान् है ।
शब्द ब्रह्म विशुद्ध चेतन बहुबोधगम्य महान् है ॥
'त्वं' को विवेकी छोड़ देते उसे 'तत्' से अलग कर ।
ध्यान मत दे 'कृष्ण' के प्रभु, क्रिया-कर्म-कलाप पर ॥ १०॥

* * *

श्री कृष्ण की वरेण्यता

शब्द बाँसुरी के कानों पड़ते बोले लोग ।
कृष्ण राधिका के इधर आने का शुभयोग ॥ १॥

कहे यशोदा नन्द से चकित देख मुख खोल ।
जन्माया जिसने जगत निज सुत वह अनमोल ॥ २॥

छिपा लिये थे निर्गुण ने जो निज गुण साकार, ।
उन्हें दिखाने के लिए सगुण कृष्ण अवतार ॥ ३॥

अर्जुन बड़ा अभिज्ञ था बना जो उसका भक्त ।
उस पर आई आँच ना गो कि सुभद्रासक्त ॥
पाप बदलता पुण्य में कृष्ण अगर अनुरक्त ॥ ४॥

याद करत श्रीकृष्ण को हुई द्रौपदी धन्य ।
वस्त्र-वृद्धि से विकल था दुर्योधन-दौर्जन्य ॥ ५॥

नजर न आता दूसरा उस जैसा बेखुन्द ।
आकर उसने बना दिया वृन्दावन वैकुण्ठ ॥ ६॥

पड़े पड़े जब बाँसुरी पड़ी हमारे कान ।
चौंक उठी, दौड़ी अजिर विना वस्त्र अनजान ॥ ७॥

हाल बुरा जो हो चला वैसा किसका होत ।
जाने कैसा दर्द वह लगी जिसे हो चोट ॥
खोजेंगी वन वन उसे त्याग वस्त्र की ओट ॥ ८॥

दी आनन्दस्वरूप ने ग्वाल भाव की भीख।
दही दूध जमकर बना सिद्ध हुई विधि ठीक।
दूध दही उसने पिया हमें मिल गई सीख ॥ ९॥

श्रवण मनन, निदिध्यासन भक्तिभाव में आम।
हो जब साक्षात्कार तो योगी हो निष्काम ॥ १०॥

जिन दिन-रातों खेलती रास करो वो याद।
आती जब वह याद तो होत कलेजा छाज ॥ ११॥

घना प्रेम दिल जो बसे होंगे हम तद्रूप।
सज्जन-दुर्लभ बात यह रोक करो ना चूक ॥ १२॥

साथ ले गये कृष्ण को हो अक्रूर का (नाश)।
जाकर लाओ कृष्ण को नतर[1] फँसो ऋण-पाश ॥ १३॥

सुनकर बोले कृष्ण से उद्धव पहुँचे पास।
गोपी बन हम भी रहें नस नस भक्ति-निवास ॥ १४॥

कामधेनु सम वेद से दुहा दूध-सा ज्ञान।
थोड़ा उसमें से मुझे पिला करो कल्याण।
मम मति-पय पतला कभी गाढ़ा कभी अजान ॥ १५॥

कही गोपियों ने सुना[2] भौंरे को जो युक्ति।
भ्रमर-गीत नामक वही दे भक्तों को मुक्ति ॥ १६॥

[1] नहीं तो
[2] सुनाकर (भौंरे को सुनाकर गोपियों ने जो युक्ति बताई)

नरगिस फूलों से उड़ा जाता भ्रमर ! पराग ।
मत रूठो, आनन्द लो उठकर (खेलो फाग) ।
आखों से आँखे लगा तन से तन की लाग ॥ १७॥

समझाया यजमान ने हैं वर-वधू महान ।
आये घर में ये यथा सूरज-चाँद समान ।
सुबह-शाम-सा यह मिलन सुन्दर सुखकर मान ॥ १८॥

कृष्ण-हाथ लाईं, मिला निज कर कर के साथ ।[1]
अलग न होते रास में कभी हाथ से हाथ ॥ १९॥

* * *

[1] अपने हाथ को श्रीकृष्ण के हाथ से जिसे हम लेकर आई हैं, मिला ले।

भगवान के नाना रूपों का बखान

मिलने का है समय प्रभु, दें दर्शन साकार ।
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ १॥

एक ज्योति अद्वैत से सदा एक आकार ।
'केवल' तेरे नाम का इससे हुआ प्रचार ।
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ २॥

लेने पर लक्षण उभय हो शिव-शक्ति-निवास ।
राह दिखा अद्वैत में बनते दीप-प्रकाश ।
हे स्थितिदाता दूसरी, शुभ तेरा व्यवहार ।
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ ३॥

स्वामी त्रिगुण त्रिनेत्र कर औपा त्रिजग का सार ।
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ ४॥

चतुर्दिशाओं चतुर्भुज ! स्थितियों तरफों चार ।
वर्णन तेरी भक्ति का चतुर्वेद का सार ।
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ ५॥

पंचानन शिव हो तुम्हीं पंचवाण-आधार ।
लगा धर्म-नौ से मुझे पंचतरणि के पार ।
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ ६॥

तुम्हें खोज लूँगा जिसका सुत छहमुखी कुमार ।
चाह देखने को मुझमें करती सदा उभाड़ ।
सब रोगों को दे भगा नाम षडक्षर मार ।
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ ७॥

असली साधु-स्वभाव है सत्संगत से नेह ।
सत्य वचन तुम हो-नहीं इसमें कुछ सन्देह ॥
राह सदाशिव ! सत्य की दिखा करो उपकार ।
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ ८॥

अष्ट सिद्धियाँ तो सदा रहती तेरे साथ ।
चारा कुछ करने धरो निज कर मेरे साथ ।
हृदय अष्टदल--मोक्ष दो--अष्टमूर्ति आधार ।
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ ९॥

नौवाँ होता धर्म-गृह करूँ बन्द नौ द्वार ।
ध्यान धरूँ तेरा करके मन औ प्राण सुधार ।
भरा तुम्हारा है पड़ा नव निधि का भण्डार ॥
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ १०॥

नागहार के नाम से तेरी करें पुकार ।
दसों दिशाओं में तुम्हीं एक मात्र आधार ।
दसों इन्द्रियों को करो मेरी विगत-विकार ।
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ ११॥

हम तेरे ही भक्त हैं हे एकादश रूद्र ! ।
औपा करो ऐसी तुम्हें पहचानें हम क्षुद्र ।
औपा करो श्रम क्यों मिले मिट्टी में बेकार ! ।
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ १२॥

बारह बुर्जों में रहे तेरा ही व्यवहार ।
बारह यज्ञों में रहे तेरा ही विस्तार ।
बारह सूर्यों में प्रकट तेरा तेजस्सार ॥
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ १३॥

त्रयोदशी शिवरात्रि का तू ही फल साकार ।
काश ! ध्यान तुमसे लगे मेरा बारम्बार ।
आत्मरूप रवि-तीर्थ का त्रयोदशी शुभकाल ।
मेरे मन को शुद्ध करो सुनकर आर्त पुकार ।
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ १४॥

रत्न चतुर्दश रूप में मन में तब अवतार ।
चतुर्दशी-स्वामी, करो मेरा भी उद्धार ।
मैं पूनम का चाँद हूँ; कर न मुझे लाचार ।
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ १५॥

पूनम और अमूस को चुन चुन पुष्प सँवार ।
सदा पूजना चाहता बन बन कर व्रतवार ।
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ १६॥

जागा जब से 'कृष्ण' के मन में तेरा प्यार, ।
पाया सेवा करने को दूजा जन्म-प्रकार ।
पवन पवन से कल मिले आज यही आधार ।
खिले कमल मम प्रेम-सर, लें आनन्द अपार ॥ १७॥

* * *

पोशिपूजा का दृश्य

हीरे-मोती चमक रहे या" शुभ विवाह के मण्डप पर,
जैसे तारे आसमान से उतर पड़े हों धरती पर ।
परमपिता ईशान देव, जो हैं परम हितैषी,
आज पोशिपूजा का उनकी आया है शुभ अवसर ॥ १॥

कोने कोने से नभ के फूल बरस रहे हैं आज,
सूर्यदेव रथ हाँक रहे हैं सारथी बनकर आज ।
अन्तहीन आकाश बना आज सुहाना तम्बू,
चलता है ईशानदेव की पोशिपूजा का शुभ काज ॥ २॥

चन्द्ररूप हीरा माथे पर चमचम करता शोभित है,
बना मोरछल पवन देव मानो उन पर दोलित है ।
चले पालकी पर उनकी कारण विष्णु-विधाता भी,
आज यहाँ ईशान देव की शुभ पोशिपूजा सुकृत है ॥ ३॥

लगे हुए हैं चित्रगुप्त भी सब सामान सजाने पर,
डुला रहे हैं इन्द्रदेव ही मोरपंख ले निज कर ।
निभा रहे हैं धर्मराज भी "धर्मदान" हो तत्पर,
आज श्री ईशान देव की है पोशिपूजा का अवसर ॥ ४॥

सप्तर्षि सात पात्रों में भरकर द्रव्य सुगन्धित,
कर रहे छिड़काव अतर कर्पूरादिक से मिश्रित ।
ग्रह सातों ने उठा लिया है दिव्य विमान स्वयं ही,
आज श्री ईशान की है पोशिपूजा संचालित ॥ ५॥

गंगासागर लिए स्वयं हुई उपस्थित है गंगा,
करने लगी सुगन्ध, उद औ दीप जलाने का धन्धा ।
देवी लक्ष्मी ही उनका चूम रही है दामन,
आज बज रहा शंकर का पोशी-पूजा का डंका ॥ ६॥

“नाबद” विद्या खिला रही जमना पंखा डुला रही,
सरस्वती बन “दूधमाँज” उनके संग विराज रही ।
आज यहाँ महादेव की पोशीपूजा चल रही ॥ ७॥

लाये सिद्धा “जंगथाल” कर्मलेखा “व्यूग” लिखाये,
बसे सभी में आत्मा जो उसकी पोशीपूजा भाये ॥ ८॥

शेष वासुकि ने ली छड़ी,
पहन कर हीरे - मोती जड़ी ।
अंधेरा मिटा, हुई रोशनी,
आज ईशान की पोशि-पूजा घड़ी ॥ ९॥

वरुण-कुबेर खर्च वरदार हैं,
बराती सभी देव सवार हैं ।
रथों का बना बाँध मैदान में,
पोशिपूजा को ईशान तैयार हैं ॥ १०॥

तेजस्वी माथे चन्दन घना है,
रवि कोटि का तेज मुँह पर बना है ।
आगे रही मूर्तिमती दया स्वयं,
आज ईशान की पोशि-अर्चना है ॥ ११॥

बना अर्घ अपने मन को किशन,
प्राणों को अपने बना ले सुमन।
लगा दे उन्हें पूजा में, जिससे,
मिट जाए अज्ञान, जले पाप-वन ॥ १२॥

* * *

शिव-स्तुति

साधुओं के साधु शिव ! दे दो मुझे यह होश ।
बलि जाऊँ तेरे पर (मुझको यह दे तोष) ॥ १॥

योगियों के योग तुम हो प्राणियों के प्राण ।
साधुओं के साधु तुम हो ज्ञानियों के ज्ञान ॥
सिद्ध तप-साधन करे तेरी औपा को मान ॥ २॥

तेरी औपा से चित्त की चेतना अच्युत ! चले ।
जिस विना सारी क्रिया जगत की कुण्ठित बने ॥
ठीक ही है प्रेम-जल राग-सोते से बहे ॥ ३॥

जन्मना ब्राह्मण भले ही दूर ब्रह्म-विचार से ।
ध्यान में लाओ न राक्षस हूँ कि मैं व्यवहार से ॥
भक्ति की प्रह्लाद ने इच्छा तुम्हारी थी तथा ।
साधुओं के साधु तुम, जय तुम्हारी जय सदा ॥ ४॥

आसरा तेरा मुझे है पूर्णपुरुष ! उदार ।
तेरे चतुश्चरण पर निज को प्रणव ! दूँ वार ।
नाद-बिन्दु स्वरूप शिव ! सुनो मेरा दुःखड़ा ।
साधुओं के साधु तुम, जय तुम्हारी जय सदा ॥ ५॥

नोट - प्रणव = ॐ स्वरूप

भर प्रकाश विचार-नेत्रों में दिलाकर ज्ञान ।
साधुओं के साधु तुम हम हैं परम अनजान ॥ ६॥

दूर कर मन को सदा कलुष औ आसक्ति से ।
रामरादन और हरमुख पर्वतों पर भक्ति से ॥
खोज कर हम भी हुए सफल तेरी प्राप्ति से ॥ ७॥

पाप कम हों या अधिक, यह न मतलब का विषय ।
हे दयालो ! साधुओं पर कर औपा, अपराध-क्षय ॥ ८॥

कृष्ण यदि गुजर पाता तेरी कतर-ब्योंत पर ।
वस्त्र धारण कर नवल नित न आता घाट पर ।
कम न पड़ता वस्त्र का "हौंज़ राद" सुजान-वर ! ॥ ९॥

* * *

वैराग्य का असली रूप

सज्जन बनकर हे मनुज ! बना चित्त कैलास ।
धरती पर रह कर करो जैसे तुम वनवास ॥ १॥

मन पर मल ले राख पहिन चाहे तन अतलास ।
मन्त्र "ॐ शिवशम्भु" के जप का कर अभ्यास ।
साधु प्रऔति के साथ रह, बना वृत्ति सन्यास ॥ २॥

विषय-त्याग का माघव्रत, सत्संगति उपवास ।
तथा बना ले शुद्ध मन, आत्मतीर्थ कर वास ।
कटवा मायामोह के लंबे-लंबे बाल ।
बस्ती में ऐसे बिता निज वनवासी काल ॥ ३॥

निजता खो, संकल्प खा, कर अपनी पहचान ।
द्वन्द्व-रहित निश्चिन्त रह घर वनवास-समान ।
रास खेल श्रीकृष्ण ने रचा गोपियों संग,
रहे ब्रह्मचारी मगर, कैसा था वह ढ़ंग ॥ ४॥

अन्तर्वासी शम्भु महामाया लेकर साथ ।
पालें सबको साधु बन, कर घर वन की बात ।
"राख त्याग की उर रमा, सजा राग से देह" ।
शुक से बोले व्यास यही - "मानो वन सा गेह" ॥ ५॥

* * *